ISSN:2583-8849



तारकेश्वरी 'सुधि'
जयपुर, राजस्थान

जब साँझ उतरती आँगन में, मिट जाती घर की नीरवता

सब कलियाँ करके बंद अधर,
संध्या की गोदी में छुपती।
राहत , शीतलता पा जाती,
ये धरती जो दिन-भर तपती।
तरुवर पुलकित होने लगते, सुनते जब खग की
कलरवता।
जब साँझ.....

तपती गर्मी की झुलसन को,
धरती से हरने ये आती।
फिर बैठ सभी के सँग बातें,
सुख-दुख की खुलकर बतियाती।
सबके घावों को मरहम से,भर कर दे देती शीतलता ।
जब साँझ.....

अपनों को तकतीं नम आँखें ,
अपनों को पाकर कर खिल जाती।
मिट्टी से सोंधी खुशबू भी ,
उठकर साँसों से मिल जाती।
मंदिर के ढोल,शंख,घंटे, कण-कण में भरते पावनता।
जब सांझ.....

हर तरफ बहके हुए से, चल रहे जन ताव में।

ठोकरो में रख जगत को, घूमते पद के नशे में।
बेचकर ईमान सारा, उड़ रहे मद के नशे में।
मिल रहा आनंद उनको, बेवजह टकराव में।
हर तरफ बहके हुए से,चल रहे जन ताव में।

बाप दादा की बदौलत, ऐश में जो- जो पले हैं।
मुख हुआ ऊँचा उन्हीं का, ऐंठ कर वे ही चले हैं।
सीखने की है जरूरत, क्या नशा ठहराव में ।
हर तरफ बहके हुए से, चल रहे जन ताव में।

पास उनके कुछ नहीं है,बस नशीला सा अँधेरा।
तोड़ दे आघात हल्का, भय लगाता शीघ्र फेरा।
जी रहे केवल नशे में,ख्वाब में, उलझाव में।
हर तरफ बहके हुए से, चल रहे जन ताव में।